रौखड़

दिनेश कर्नाटक

रौखड़

ज्यादा समय नहीं बीता, जब देवकोट में लोगों को आपस में बात करते हुए देखा जाता था। लोग अब मोबाइल में बात करना पसंद करने लगे थे। रही सही कसर ऊँची

आवाज में चिंघाड़ रहे टेपों और चैबीसों घंटे चलने वाले टीवी ने पूरी कर दी थी। पक्की सड़क अपने साथ बहुत सी नई चीजें लेकर आई। छोटे-बड़े ट्रकों में लदकर आ रही इन रंग-बिरंगी चीजों ने लोगों को अपने आकर्षण में बाँध लिया था। इन चीजों को खरीदने के लिए सभी को ज्यादा से ज्यादा रुपयों की जरुरत महसूस होने लगी थी। गुटखा चबाना और सिगरेट पीना आधुनिक होने की पहचान माना जाने लगा था। सब कुछ भूलकर बेसुध पड़े रहने के लिए शराब तो थी ही अब सुरिया हिंदी फिल्मों की आड़ में लड़कों को सेक्स की तमीज सिखाने में लगा हुआ था। रास्ते बेशर्मी से फैंके हुए प्लास्टिक के पाऊचों के आगे बेबस थे। लोग नए-नए तरह के साबुनों और शेम्पूओं से अपने शरीर की बास भगाने में लगे थे। क्रिकेट सभी का प्रिय खेल बन चुका था और लड़के गांधी और भगत सिंह के बजाए सचिन और धौनी को ज्यादा अच्छे से पहचानने लगे थे। अखबार ने उनके जीवन में घुसपैठ करके उनको शेष दुनिया की चिंताओं से जोड़ दिया था। वे पढ़ाई से ज्यादा छुटभैये नेताओं को महत्व देने लगे थे।

लोगों की बढ़ती हुई चहलकदमी से पंतजी ने अंदाजा लगाया कि अखबार आ गया होगा। अखबार का मालिक होते हुए और खबरों को लेकर भारी जिज्ञासा होने के बावजूद अखबार अभी उन तक पहुँचने वाला नहीं था। हर एक को पढ़ने की जल्दी होती है। शुरू में अखबार के प्रति लोगों में ऐसी उत्सुकता नहीं थी। अब लोग खबरों के लिए बेचैन रहने लगे थे। कई बार तो झगड़े तक की नौबत आ जाती थी। ऐसे में उन्हें दुकान से बाहर निकलकर लोगों को समझाना पड़ता था।

अखबार पढ़ने वाले जितनी जल्दी आते उतनी ही जल्दी लौट भी जाते थे। पहले पंतजी अखबार के पन्नों को इधर-उधर छोड़ जाने वालों पर जमकर बरसते थे, बल्कि बीच में उनको तमीज सिखाने के लिये उन्होंने कुछ समय के लिए अखबार लेना ही बंद कर दिया था। उसी का असर है कि अब उनको सारे पृष्ठ सही-सलामत मिल जाते हैं। पन्नों को क्रम में लगाकर वे खुद भी खबरों की दुनिया में खो जाते। अब कोई अखबार की ओर ललचाई हुई नजरों से देखता तो उसे झिड़क देते। इस दौरान सौदा लेने आए हुए ग्राहकों को रमेश ही निपटाता था।

'पता नहीं कैसा अखबार पढ़ते हैं... किसी ने मटेना की खबर नहीं पढ़ी?' हवलदार जाने से पहले उनके साथ खास खबरों पर चर्चा कर लिया करता था।

'मटेना में क्या हुआ?'

'मदनदा के लड़के ने रवि को पीट रखा है। रविया का फोटो छपा है।'

'डिप्टी का लड़का तो बिगड़ा हुआ है, लेकिन... राजेश तो ऐसा नहीं है... जरूर, रविया, ने ही गड़बड़ की होगी!'

'उनके बीच तो सालों से अनबन चल रही है!'

'डिप्टी के साथ अनबन की बात तो मालूम है... लेकिन इस बीच क्या हुआ? मदनदा रोज ही मेरे साथ बैठता है, उसने तो कभी जिक्र नहीं किया।'

'मदनदा के मुँह से तुमने कभी किसी की बात सुनी... जो वो अपनी बात सुनाएगा! वो तो अलग ही आदमी है!'

पंतजी एक साँस में संक्षिप्त वाले कॉलम में छपी छोटी सी खबर को पढ़ गए।

'इतने लोग दुकान में आते हैं, किसी ने कुछ नहीं कहा। क्या किसी को भी मालूम नहीं होगा?' उन्होंने हवलदार से पूछा।

'अब किसी को फुर्सत भी है, जो कोई तुमको बताएगा। पहले वनडे था, अब ट्वेंटी-ट्वेंटी होने लगा है!' पंतजी को ध्यान आया, कल मदनदा की नमस्कार में भी रोज वाली वाली बात नहीं थी। तभी लगा था, कुछ न कुछ गड़बड़ जरूर है।

उनके भीतर मदनदा का अब तक का जीवन तेजी से घूमने लगा। अँधेरे में रास्ता तलाशने की कोशिश में भटके हुए आदमी सा रहा था मदनदा का जीवन! कैसे-कैसे दिन देखे? न खाने का ठिकाना, न रहने को छत! लेकिन कभी हार नहीं मानी, जो कर सकता था, वह काम खुशी-खुशी किया! कभी मुफ्त की रोटी नहीं तोड़ी... और रोटी कमाना कभी भारी नहीं पड़ा! जिंदगी के इतने रूप देखे और भोगे कि कभी किसी ने उसे धैर्य खोते हुए नहीं देखा... हमेशा उम्मीद से भरा रहा। आज उसके पास कोई कमी नहीं है, अपनी जमीन, अपना मकान, बेटा देश की सेवा में... अब हवलदार बता रहा था, सब कुछ होते हुए भी वह ऐसी उलझन में फँसा था, जिससे पार पाने का कोई रास्ता उसे सूझ नहीं रहा था।

मटेना में एक समय डिप्टी का एकछत्र राज था। उसके परिवार के अलावा, खेतों में काम करने वाले मजदूर ही वहाँ रहते थे। बुजुर्ग बताते हैं कि एक अँग्रेज डिप्टी कलैक्टर को शिकार के दौरान वह जगह इतनी पसंद आई कि रिटायर होने के बाद वह अपने परिवार के साथ वहीं रहने लगा। डिप्टी का पिता उसके भरोसे का आदमी था। घर और खेती-बाड़ी के सारे काम वही देखता था। आजादी के बाद जब सभी अँग्रेज अपने घरों को लौटने लगे, तब भी वह यहीं रहना चाहता था। लेकिन पत्नी और बच्चों

के आगे विवश होकर उसे यह जगह छोड़नी पड़ी। जाते समय वह फिर कभी अपनी प्यारी जगह में लौटकर आने की उम्मीद में सारी जायदाद डिप्टी के पिता को सौंप गया।

डिप्टी का पिता सीधा-सादा इनसान था। जब तक जिया साहब-बहादुर के आने की प्रतीक्षा करता रहा और

अपने को जमीन का चौकीदार कहता रहा। सुरेंद्र सिंह के रंग-ढंग बचपन से ही अलग किस्म के थे। उसे पिता के तौर-तरीके कभी पसंद नहीं आए। उसे अँग्रेजों की तरह पहनना और जीना पसंद था। उसके इन्हीं रंग-ढंगों के कारण आस-पास के लोग उसे 'डिप्टी' कहने लगे थे।

डिप्टी की पत्नी शोर मचाते, दौड़ते-भागते हुए बदहवास लोगों के बीच से आई थी। उसे मटेना का शांत और ठहरा हुआ जीवन डसता रहता था। आए दिन अपने भाग्य को कोसती, 'यह भी कोई जिंदगी है... वही खेत... वही जंगल... वही उदास और सुनसान पगडंडियाँ... कोई ऐसा नहीं जिसके साथ दुख-सुख बाँटा जा सके!'

वह पत्नी को समझाता, 'क्या शेर कभी लोगों की भीड़ के बीच में रहता है?'

वह खीझकर कहती, 'मैं जानवर नहीं हूँ!'

काफी समय से बरसाती गधेरे से सटी रौखड़ जमीन डिप्टी के दिमाग में घूम रही थी। कई बार उसे आबाद करवाने की इच्छा हुई, पर बड़े-बड़े पत्थरों, चट्टानों और भीषण झाड़ी को देखकर इरादा बदल जाता था। सोचता, पैसा खर्च करने के बाजए, जो है उसी से क्यों न कमाया जाए? वैसे भी वहाँ कौन बसना चाहेगा। फिर वह अपने सामने कोई प्रतिस्पर्धा खड़ा नहीं करना चाहता था। हाँ, रौखड़ के लिए कोई गरीब-गुरबा राजी हो जाए तो एक तीर से कई निशाने सध जाते।

पत्नी के रोज-रोज के तानों से आजीज आकर उसने अपनी मंशा आस-पास को लोगों को बता दी थी।

डिप्टी की मंशा जानकर एक दिन मदनदा अपने दो रिश्तेदारों के साथ जमीन की बात करने के लिए डिप्टी की ड्योढ़ी में आकर बैठ गया था। मदनदा कई बार उस के खेतों में काम कर चुका था। उस को देखते ही डिप्टी के चेहरे में मुस्कान फैल गई। ऐसे ही लोग तो वह चाहता था। गरीब और जरूरतमंद... जो जमीन की लालसा में उसकी

रियाया बने रहें... और इनकी औरतें उसकी पत्नी का मन बहलाती रहें... इस से बढ़िया और क्या होगा?

जमीन का सौदा हो गया। कुछ ही दिनों में उन लोगों ने अपने और मवेशियों के लिए झोपड़ियाँ बना दी... घर-गृहस्थी सजाई... डिप्टी बीच-बीच में कारिंदों को भेजकर उनकी खबर लेते रहता... मन ही मन घबराया रहता... मेरी शरण में आने से पहले ही... कहीं रौखड़, जंगली जानवरों और भयानक एकांत से घबराकर भाग न जाएँ!

बरसात शुरू हुई... तो होती ही चली गई। ऐसी भीषण बरसात भी शायद उसी साल होनी थी। पानी रुकने का नाम नहीं ले रहा था। गधेरा उफनने लगा। गधेरे की दानवीय गर्जना सभी का दिल दहलाने लगी। फिर झड़ शुरू हो गए। झोपड़ियों के भीतर पानी भरने लगा। बैठे-बैठे रात बितानी पड़ने लगी। कभी साँप निकल जाता तो कभी बिच्छू को देखकर बच्चे रोने-चिल्लाने लगते। समीप के कस्बे से संपर्क कट गया। राशन और तेल-मसाले खत्म होने पर बीस किमी का रास्ता तय करके दूसरे कस्बे में जाना पड़ता था।

तीनों आपस में मिल-जुलकर कोई न कोई रास्ता निकाल लेते थे, किसी ने डिप्टी के आगे हाथ नहीं फैलाया। इस जद्दोजहद के बीच मदनदा सभी का हौंसला बढ़ाता रहा। जबकि पानी के उतरते ही रिश्तेदारों ने सामान समेटना शुरू कर दिया।

मदनदा को पता चला तो वह हक्का-बक्का रह गया - 'वक्त बदलने में कितना टैम लगता है? नई जगह में असज होती ही है... जमीन मैंने पहचान ली है... आज खून-पसीना माँग रही है... एक दिन सोना उगलेगी... बगैर तपस्या के कुछ नहीं मिलता... फिर इतने रुपयों में हमें मौके की एक गज जमीन भी नहीं मिलेगी।'

'यहाँ रहकर मरना थोड़ा है! ...जैसा किस्मत में होगा देखा जाएगा... शहरों में कितना काम है... मजदूरी कर लेंगे!'

'आदमी अपनी किस्मत खुद बनाता है या तो वो खुद ही अपना मालिक बन जाए या जिंदगी भर दूसरों की गुलामी करता रहे!'

'हमने तुम्हारा भरोसा किया था। कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि तुम हम को ऐसी जगह में ले आओगे? बनाओ तुम अपनी किस्मत! हमें हमारे हाल में छोड़ दो!' दोनों तैश में आ गए।

'हमें अकेला छोड़ जाओगे?'

'तुम भी चलो... इस रौखड़ में कुछ नहीं होने वाला... खाली अपना खून क्यों सुखाते हो?'

'मैं कहीं नहीं जाऊँगा... मेरा जीना-मरना अब यहीं होगा!'

'ठीक है... हमको हमारा पैसा दिलवा दो!'

'पैसा...! डिप्टी, पैसा क्यों वापस करेगा... सौदा हो गया... बात खत्म!'

'हम कुछ नहीं जानते... तुम ही हम को लाए थे... हमारा पैसा वापस दिलवाओ!'

'इतने जल्दी तुम लोगों ने सब कुछ तय कर लिया, मुझे कुछ बताया भी नहीं! देखो, कोशिश करता हूँ... बाकी तुम्हारी किस्मत!' लंबी निःश्वास छोड़ते हुए मदनदा ने कहा।

'दाज्यू, पैसे तो तुमको देने ही पड़ेंगे... चाहे डिप्टी से दिलवाओ... या खुद दो...!'

मदनदा ने सिर पकड़ लिया। क्या कहता, अगले दिन सुबह-सुबह डिप्टी के सामने हाथ जोड़कर बैठ गया।

'क्या बात भई... तुम लोग तो भूल ही गए! इतने दिनों बाद कैसे याद आई?'

'डिप्टी सैप... आप ठैरे बड़े आदमी... हम हुए गरीब लोग... जमीन नहीं बनाएँगे तो क्या खाएँगे? मैंने तो सोच लिया है... अब जो होगा, देखा जाएगा... जो कदम उठा दिया सो उठा दिया... इन लोगों को जगह रास नहीं आ रही!'

'रास नहीं आ रही, क्या बात हो गई?'

'मेरे भरोसे आए थे... इनको लगता है, मैंने जानबूझकर इनको यहाँ फँसा दिया। अपना पैसा माँग रहे हैं!'

'क्या... कह रहे हो...?' डिप्टी चौंका, फिर सँभलकर बोला, 'ऐसी भी क्या जल्दबाजी है, थोड़ा सोच-समझ लो...!'

'इनको मैंने ही तैयार किया ठैरा... रिश्तेदारी की बात हुई... फिर सौदे के समय जमीन छोड़ने पर पैसा वापस होगा कि नहीं ऐसी भी कोई बात नहीं हुई थी।' मदनदा ने अपनी होशियारी का प्रयोग किया।

'शर्त क्या होती है... क्या मैंने तुम लोगों पर जोर-जबरदस्ती की... जमीन से भगा रहा हूँ... सौदे का इतना उसूल भी नहीं जानते... किसी से भी पता कर लो... कोई कह देगा कि मैं गलत हूँ तो तुरंत पैसा वापस कर दूँगा!'

'नहीं, डिप्टी सैप... हमें किसी से कुछ नहीं पूछना... आप और हम एक ही ठैरे... गरीब आदमी का पैसा ठैरा... तिल-तिल करके जोड़ा हुआ... आप ही न्याय करो!' मदनदा ने हाथ जोड़ दिए।

'इस बारे में बात करने से कोई फायदा नहीं... पैसा वापस नहीं होगा... क्या मैं तुम लोगों को बुलाने तुम्हारे घर आया था... तुम्हारा मन हुआ जमीन खरीदी... अब जो करना है करो!'

'ठीक है, डिप्टी सैप... मंजूर है आपका न्याय... समय लगेगा... लेकिन इनका रुपया मैं तारूँगा!'

'जो करना है करो... सुबह-सुबह दिमाग खराब करने आ जाते हैं!' डिप्टी पैर पटकते हुए कमरे के अंदर चला गया।

तीनों एक-दूसरे की सूरत देखते रह गए।

'ऐसे आदमी से कैसे निभाओगे दाज्यू!'

'देखा जाएगा... कैसा-कैसा देखा... ये भी सही!'

इसके बाद मदनदा ने न दिन देखा... न रात... न जाड़े देखे... न बरसात... साबित कर दिया कि इनसान चाहे तो क्या नहीं कर सकता... बीवी-बच्चों के साथ मिलकर जमीन को खेती के लायक बनाया... ऐसी कायाकल्प की जिसके बारे में कोई सोच भी नहीं सकता था... रौखड़ में चारों तरफ खेत ही खेत... कहीं धान की फसल तो कहीं सब्जियाँ... आम, लीची, पपीते के पेड़... मदनदा जिस काम में लग जाता, उसे पूरा करके ही हटता... आस-पास के गाँवों के लोग कहते कि उससे डरकर रौखड़ के भूत भी भाग गए... सब से पहले रिश्तेदारों का कर्जा चुकाया... बच्चों को पढ़ाया-लिखाया... जंगल में मंगल कर दिया... जो आता उसकी तारीफ किए बिना नहीं रह पाता था... 'मदनदा मान गए तुमको... तुम ने तो यहाँ स्वर्ग बना दिया!'

पंतजी वर्तमान में लौटे तो देखा उनके सामने मदनदा था। उनको घटना के बारे में जानने की इतनी उत्सुकता हो रही थी कि उन्होंने इसके लिए कोई भूमिका बनाने की जरूरत भी नहीं समझी।

'मदनदा, क्या बात हो गई थी... कल मैंने अखबार में राजेश की खबर देखी थी?'

'पंतजी, आप सब जानने वाले ठैरे... जिनगी भर मैंने फूक-फूककर कदम रखा... राजेश सब समझता है... मेरी कच-कच मुझी को सुनाने की उम्र का हो गया... जवान खून हुआ... मैं तो जिसने जो कहा सुन लेने वाला हुआ... लेकिन अन्याय तो वो भी बर्दाश्त करने वाला नहीं हुआ!'

'रविया के बारे में तो मैं सुनता ही रहता हूँ! राजेश उससे कैसे उलझ गया?'

'अब क्या बताऊ पंतजी... बात समझने के लिए आपको मेरी पूरी रामायण सुननी पड़ेगी... मंजूर है तो बताओ?'

'मंजूर! आज यही सही!'

'अपने ईजा-बाबू को मैंने कभी देखा नहीं... इतना ही पता है कि मुझे जन्म देने के बाद एक दिन ईजा पहाड़ से गिरकर मर गई... बाबू पागल हो गए और एक दिन वो भी चलते बने... होश आया तो खुद को मामा लोगों की चाकरी करते हुए पाया... कहने को मैं उनका भाँजा हुआ, लेकिन असल में मैं उनका नौकर ठैरा... मामा-मामी से लेकर उनके बच्चों तक सबके पास मेरे लिए काम ठैरे... एक मिनट के लिए भी खाली नहीं बैठना हुआ... मारना शुरू कर देने वाले हुए... दूसरे बच्चों की तरह मेरा भी खेलने को मन होने वाला हुआ... भागने-दौड़ने और उछलने-कूदने के लिए तड़प जाने वाला ठैरा... कामों को जल्दी-जल्दी निपटाते जाता कि काम खत्म होते ही लड़कों की ओर दौड़ लगा दूँगा! पर काम द्रौपदी के चीर की तरह बढ़ते चले जाने वाले हुए... मैं सोचने वाला हुआ, सारे काम मुझे एक साथ बता देते तो उनको निपटाकर मैं भी कुछ समय लड़कों के साथ खेल लेता!'

वो झगड़ा कैसे हुआ?' पंतजी उसको मूल विषय की ओर लाना चाह रहे थे।

'पंतजी, पुराने घाव को छेड़ने का अलग ही मजा ठैरा... अब जब बात चल ही रही है तो जल्दबाजी कैसी...! एक दिन डिप्टी ने मुझे अपने वहाँ बुलवाया। कहने लगा, तू अकेला पड़ गया है... बंजर में हाड़ फोड़ने के बाजए मेरे खेतों में काम क्यों नहीं करता। राशन-पानी की कोई कमी नहीं होगी। जरुरत पड़ने पर पैसा भी मिल जाएगा। मुझे

बुरा लगा। कह दिया, कैसी बात कर रहे हो, जमीन होते हुए बेगार करनी पड़े तो व्यर्थ है यह जीवन! डिप्टी को बात लग गई। उस दिन से उसने मुझसे बात करना छोड़ दिया। मैं नमस्कार कहता, वो मुँह फेर लेता। फिर एक दिन मेरे वहाँ आ धमका, कहने लगा रिश्तेदारों वाली जमीन पर मेरा हक नहीं बनता। मुझे रकम देने लगा।

महाराज सुनते ही आग लग गई। जैसे-तैसे खुद को सँभाला तो धमकाने लगा। मैंने भी कह दिया, अगर जमीन बना सकता हूँ तो उसकी रक्षा भी कर सकता हूँ, जिसने जमीन को टेढ़ी नजर से देखा उसकी गर्दन उड़ा दूँगा... फिर भले ही जीवन भर जेल में चक्की क्यों न पीसनी पड़े। अगले ही दिन मैं थाने में जान-माल के खतरे की तहरीर दे आया। गरीब को चैन से रोटी खाते हुए नहीं देख सकने वाले ठैरे! खून-पसीना एक करके जमीन बनाई... फसल काटने का मौका आया तो मालिक बनने को तैयार! मेरा लड़का... बचपन से ही समझदार हुआ! रौखड़ से बड़े-बड़े पत्थर निकालने हों... लकड़ी के गिल्टे उठाने हों... हमेशा कंधा देने को तैयार ठैरा! बेचारे ने बहुत मेहनत की। पढ़ा भी और मेरा हाथ भी बँटाया!' मदनदा की आँखों से आँसू बहने लगे।

'रोते क्यों हो... सब ठीक हो रहा है... डिप्टी को समझा देंगे!'

'महाराज, उसको समझाते हुए तो बड़े-बड़े हार गए। जमीन इसलिए कमाई की बच्चों को मेरे जैसे दिन न देखने पड़ें! राजेश फोर्स में क्या लगा, जलकर राख हो गए। चोरी और गुंडा-गर्दी की कहानी बनाकर उसके सीओ को चिट्ठी भेज दी। राजेश ने अपने साहब को पहले ही सब कुछ लिखकर दे रखा था। मात खा गए!'

'अच्छा, ऐसा किया!'

'अरे पंणजी, कैसा-कैसा नहीं किया? क्या-क्या बताऊँ! बिजली के खंभे लगे... हमारी ओर एक भी नहीं लगने दिया... सिंचाई के लिए लाखों की स्कीम आई... अपनी ओर गूलों का जाल बिछवा दिया... पानी की टंकी और नल लगने लगे... अपने वहाँ लगवा दिए। पंणजी आप ही बताओ क्या हम इनसान नहीं हैं? हमने डिप्टी का क्या बिगाड़ा?... राजेश ने सीओ के जरिए डीएम को चिट्ठी भिजवाई... कब से जाँच चल रही है... पूरी होने को नाम नहीं लेती... अफसर आते हैं, समझौता करने को कहते हैं... कहते हैं तुम्हारी बहू-बेटियाँ हैं... परिवार है... जो आता है उसी का पक्ष लेता है।

उस दिन बेटी ने नल से पीने का पानी क्या ले लिया... रवि गाली-गलौज करने लगा... राजेश घर आया हुआ था, बर्दाश्त नहीं कर सका, दो-तीन हाथ जमा दिए। बहू-बेटियों

के सामने गालियाँ बकने लगा... राजेश को कितना रोका, नहीं माना, अच्छे से ही ठुकाई कर दी। बात आई-गई हो गई!

एक दिन, एक मित्र से पता चला... कि बाप-बेटे राजेश को मरवाने की फिराक में हैं... बेटे की जिंदगी का सवाल ठैरा... सीधे कप्तान साहब के पास पहुँचा... भले आदमी थे बेचारे... मैंने भी सब कुछ बता दिया... कहने लगे मैं खुद तुम्हारे वहाँ आऊँगा... और ऐसी बात नहीं एक दिन साहब आए, साथ में एसडीएम साहब को भी लेकर आए... डिप्टी ने गिरगिट की तरह रंग बदल दिया... साहब ने पानी से लेकर बिजली तक... हर चीज खुद चलकर देखी... साहब लोग जो कहते वो खोपड़ी हिलाते जाता... मैंने भी सोचा... अब क्या करेगा... समझौता कर लिया।

कुछ होता कि नहीं होता एक-एक करके दोनों की बदली हो गई। साँप अपनी फितरत थोड़ा छोड़ता है। लड़का दिवाली की छुट्टियों में घर आ रहा था। बीच जंगल में घात लगाकर बैठे थे। सोचा होगा, बेटा गया तो मदनदा भी गया। कमांडो ट्रेनिंग ठैरी... सब को धूल चटा दी। पुलिस वाले तैयार कर रखे थे। उल्टे राजेश पर जान से मारने का आरोप लगा दिया। घर से उठाकर ले गए। उसने अपने साहब का फोन नंबर दे रखा था। पुलिस वालों की आड़ में उसे पीटना चाहा तो उसने भी अपने हाथ दिखा दिए। मैंने दरोगा को बता दिया, मामला पुराना है सब जगह पहले से रिपोर्ट है। समय से साहब का भी फोन आ गया।

'मदनदा, इतना सब हो गया, हम को तो पता ही नहीं चल पाया और तुम आज बता रहे हो!'

'पंतजी, अब हमारी तो किस्मत ही ऐसी है... अपनी परेशानी के लिए औरों को क्या परेशान किया जाए?'

'ऐसे कब तक चलेगा मदनदा, डिप्टी से खुलकर बात होनी चाहिए।'

'कोई रास्ता नहीं निकलता... दो बार उस के वहाँ गया... उसने बात तक नहीं की... वो हमको इनसान ही नहीं समझता... लोगों के सामने बड़ा भला इनसान बन जाता है... ऐसे इनसान से कैसे बात करें? लड़का कह रहा था, जमीन-मकान को बेचकर कहीं और जमीन खरीद लेते हैं... आदमी कितनी लड़ाइयाँ लड़े... कितने दुश्मनों से सतर्क रहे! मैंने उस से कहा, क्या गारंटी है, जहाँ जाएँगे, वहाँ ऐसे लोग नहीं होंगे! उसकी फोर्स हर वक्त देश के दुश्मनों से लड़ती रहती है... क्या वह नौकरी छोड़ देगा? क्या जवाब देता चुप हो गया! मैंने कहा, बेटा, शांति तो मरकर ही मिलती है!

पंतजी, बड़ी-बड़ी बातें तो सभी कर लेते हैं! बच्चों पर किसी भी तरह की मुसीबत आदमी बर्दाश्त नहीं कर पाता। इस घटना के बाद मैं सोच में पड़ गया। जमीन-जायदाद बच्चों से बढ़कर थोड़ा है। एक दिन मैंने राजेश से कहा, तू ठीक कहता था, हमें यह जगह छोड़कर कहीं और चला जाना चाहिये! कहने लगा... उस दिन मेरी बात गलत थी, तुम्हारी बात सही थी। आज तुम गलत कह रहे हो! हम कहीं नहीं जाएँगे? मैंने कहा, बेटा, मैं तुम सब की खातिर ऐसा सोच रहा था। देर तक मेरी ओर अजीब नजरों से देखता रहा। मैं घबरा गया था। फिर कहने लगा, तुम जाना चाहो तो जा सकते हो, मैं अब कहीं नहीं जाऊँगा!'

घाव से मवाद निकलने पर जैसी राहत महसूस होती है, पंतजी को वैसा ही भाव मदनदा के चेहरे पर नजर आ रहा था। वे मुग्ध भाव से मदनदा की ओर देख रहे थे। वे बहुत कुछ कहना चाह रहे थे, पर उनकी समझ में नहीं आ रहा था, क्या कहें? न उनको शब्द मिल पा रहे थे, न ही कोई विचार सूत्र!

मदनदा ने जेब से बीड़ी का बंडल निकाला और बीड़ी सुलगाकर लंबे-लंबे कश खींचने लगा।

अचानक वह झटके से उठकर खड़ा हो गया।

'अरे महाराज, देर हो गई, जानवरों के खाने-पीने का समय हो गया... मेरी राह देख रहे होंगे!'

पंतजी 'बैठो... बैठो...!' कहते रह गए। जबकि मदनदा तेजी से मटेना की ओर को चल दिया।